**International Journal of Hindi Research**
**www.hindijournal.com**
**ISSN: 2455-2232**
**Received: 29-06-2026, Accepted: 30-07-2026, Published: 14-08-2026**
**Volume 12, Issue 3, 2026, Page No. 102-104**

# नाथ साहित्य का अनुशीलन

**डॉ0 अनुपम मिश्र**
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, श्रीमती इन्दिरा गांधी राजकीय पी.जी कॉलेज, लालगंज, मिर्जापुर उत्तर प्रदेश, भारत

**सारांश**
नाथ साहित्य हिन्दी साहित्य का अति महत्वपूर्ण अंग है। नाथ साहित्य के पुरस्कर्ता गोरखनाथ माने जाते हैं। नाथ साहित्य का आधार योगशास्त्र है। योगशास्त्र के द्वारा इंद्रिय निग्रह कर एक योगी या अवधूत पिण्ड में स्थित ब्रह्म का साक्षात्कार कर सकता है। नाथ साहित्य का उद्भव सिद्ध साहित्य से हुआ है, किन्तु नाथ साहित्य में वामाचार एवं नारी भोग का पूर्ण निषेध है और आचरण की शुद्धता पर बहुत अधिक जोर दिया गया है। संत साहित्य तथा कबीर पर नाथ साहित्य का प्रभाव बहुत अधिक पड़ा है।

**मूल शब्दः** इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना, सहस्त्रारचक्र, मूलाधार, अलख निरंजन, हठयोग, कुण्डलिनी जागरण, नेति, धौति, सहजयान, वज्रयान, शून्यवाद, सबद, सिद्धसाहित्य इत्यादि

आचार्य रामचंद्र शुक्ल प्रभृति विद्वानों की मान्यता है कि नाथ पंथ का उद्भव सिद्ध साहित्य से हुआ है, क्योंकि चौरासी सिद्धों में कई नाथ पंथी योगियों का उल्लेख किया गया है। किंतु ध्यातव्य है कि जहाँ सिद्ध सम्प्रदाय में महासुखवाद एवं युगनद्ध की भावना व पंचमकार तथा विषयभोग की प्रबलता है वहीं नाथ पंथ में शुद्ध सात्विक आचरण तथा योगशास्त्र को बहुत अधिक महत्व दिया गया है। सिद्धों ने सहजयान को जीवन का मूलमंत्र माना। एक जगह सहजयान में मन और इन्द्रियों को निर्बन्ध छोड़ने की बात कही गयी है :–

खाअन्त पिअन्ते सुहहिं रमन्ते,
णित पुराण–चक्काविं भरंते।
अइस धम्म सिज्झई परलोअह,
णाय पाय दलिऊ भयलोअह ।। [1]

अर्थात स्वेच्छापूर्वक खाने–पीने और सुख में रमण करने से परलोक प्राप्त होता है और सांसारिक भय समाप्त हो जाते हैं।
सिद्धों की इसी विषयभोग के प्रति आसक्ति से विरत होकर नाथ पंथ का उदय होता है। पहले कहा गया है कि नाथ पंथ का मूल उत्स सिद्ध साहित्य है, किंतु सिद्ध साहित्य गुह्य–साधना, नारी भोग आदि के कारण कालान्तर में विकृत होता चला गया, जिसके परिणामस्वरूप नाथ पंथ प्रकट हुआ। महात्मा बुद्ध ने अत्यधिक काया–क्लेश का निषेध किया था, इसी विचार को आधार बनाकर सिद्धों ने उसे 'महासुखवाद' में प्रवर्तित कर दिया। सिद्धों ने ऐसा विचार प्रस्तुत किया कि जो सुख गृहस्थ भोगते हैं, वैसा ही सुख हमें भी चाहिए और उनका मानना था कि जिस कर्म से गृहस्थ पतित हो जाता है, उस कर्म से हमारा पतन नहीं होगा–

कर्मणायेन वै सत्वाः कल्प–कोटि–शतन्यापि
पच्यन्ते नरके घोरे तेन योगी विमुच्यते। '' [2]

सिद्धों ने यह भी कहा कि यदि मन में किसी प्रकार का क्षोभ–असंतोष है, तो सिद्धि प्राप्त नहीं हो सकती। इस प्रकार सिद्धों की सुख–लोलुपता तथा नारी– साहचर्य की भावना से विरत होकर नाथ पंथ का उदय हुआ। प्रसिद्ध सिद्ध कवि कण्हपा कहते हैं कि जैसे पानी में नमक घुल जाता है, उसी प्रकार घरवाली (स्त्री) में अपना चित्त निमज्जित कर देना चाहिए –

जिमि लोण बिलज्जई पाणि एहि,
तिमि घरणी लई चित्त।
समरस जई तक्खणे
जइ पुणु ते सम नित्त।। [3]

गोरखनाथ ने 11वीं – 12वीं शताब्दी के लगभग वज्रयान तथा सिद्ध साहित्य के अश्लील तथा वीभत्स विधानों से अलग होकर नाथ पंथ की स्थापना की। नाथ पंथ में 'शिव' को आदि शक्ति के रूप में माना गया है तथा ईश्वरवाद की निष्ठा से पतंजलि के योगशास्त्र के लेकर 'हठयोग' की परिकल्पना की गई है। विद्वानों का अभिमत है कि गोरखनाथ के गुरू मत्स्येन्द्र नाथ थे तथा मत्स्येन्द्र नाथ के गुरू जालंधर नाथ थे जिन्होने सिद्धों की परम्परा से अलग हटकर नाथ पंथ का मार्ग प्रशस्त किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार– ''पंजाब का जलंधर शहर उन्हीं का स्मारक जान पड़ता है। नाथ संप्रदाय के किसी ग्रंथ में जलंधर को बाल नाथ भी कहा है। नमक के पहाड़ों के बीच 'बाल नाथ का टीला' बहुत दिनों तक प्रसिद्ध रहा। मत्स्येन्द्र जलंधर के शिष्य थे, नाथ पंथियों की यह धारणा ठीक जान पड़ती है। '' [4]

## नाथ सम्प्रदाय/साहित्य का सिद्धान्त एवं दर्शन–

गोरखनाथ ने महर्षि पतंजलि के योगशास्त्र को आधार बनाकर 'हठयोग' का प्रवर्तन किया। हठ योग साधना ईश्वरवाद की अवधारणा पर आधारित है जिसमें 'पिण्ड में ही ब्रह्माण्ड' की परिकल्पना समाहित है। यहाँ 'हठयोग' में 'ह' का अर्थ है सूर्य तथा 'ठ' का अर्थ है चन्द्र अर्थात सूर्य चन्द्र, इड़ा – पिंगला व सुषुम्ना नाड़ी के आरोहण तथा षट्चक्रों के बेधने से पिण्ड में स्थित ईश्वर का साक्षात्कार होता है। योग साधना को चित्तवृत्ति का निरोध कहा गया है– योगः चित्तवृत्ति निरोधः। नाथपंथ के पूर्ववर्ती सिद्ध साहित्य में चित्तवृत्ति के प्रसार का पूर्ण समर्थन था, किंतु नाथ संप्रदाय में चित्तवृत्ति के निरोध के लिए योगसाधना पर बहुत अधिक जोर दिया गया है। मन की चंचलता बहुत प्रबल है, जिसे परवश से वश में करने की प्रक्रिया बहुत जटिल है, जैसा कि संत कबीरदास ने कहा है –

मैमंता मन मारि रे, नान्हाँ करि–करि पीस।
तब सुख पावै सुन्दरी, ब्रह्म झलक्कै सीस।। '' [5]

मन, चित्त, आदि की गति को नियमित और नियंत्रित करने से ईश्वर की प्राप्ति हो सकती है। यहाँ मनोविज्ञान और योगशास्त्र के अंतर को समझना आवश्यक है क्योंकि आधुनिक मनोविज्ञान व्यक्ति–मन की पड़ताल करता है 'हठयोगी' मन को शारीरिक क्रियाओं (रेचक पूरक, कुंभक, नेति, धौति इत्यादि) के द्वारा बलपूर्वक नियंत्रित कर लेता है। गुरू गोरखनाथ ने कहा है कि सच्चा योगी वह है जिसका चित्त विकार का साधन उपस्थित रहने पर भी अडिग रहता है, और जिसका मन सदैव निश्चल रहता है –

नौ लखि पातरि आगे नाचैं, पीछे सहज अखाड़ा।
ऐसे मन लें योगी खेलें, तब अंतरि बसै भंडारा।। [6]

## गोरखनाथ निर्गुण

निराकार ब्रह्म को साक्षात्कार करने का रहस्य बताते हैं, जहाँ पाताल की बंगा ब्रह्माण्ड में जाकर विमल रस का पान करती है–

अदेषि देषिवा देषि विचारिबा
अदिसिट राखिबा चीया।
पाताल की गंगा ब्रह्माण्ड चढ़ाइवा,
जहाँ बिमल–बिमल जल पीया।। '' [7]

अर्थात् अदृश्य को दृश्य रूप में चित्त में रखकर कुण्डलिनी ब्रह्मरंध्र में स्थित ब्रह्म का साक्षात्कार करती हुई विमल रसों का पान करती है। एक हठयोगी नाथ पंथी साधक पाताल की गंगा को अथवा योगिनी शक्ति को साधना द्वारा ऊर्ध्वगामी बनाकर सहस्त्रार में स्थित ब्रह्म रस का पान करता है।
नाथ पंथ में सिद्ध सम्प्रदाय की प्रतिक्रिया स्वरूप आचरण की शुद्धता पर बहुत अधिक बल दिया गया है तथा चित्त शुद्धि एवं अंतस्साधना को अति महत्वपूर्ण माना गया है। वाह्य–आडंबर तथा वेद–पुराण में वर्णित ज्ञान को व्यर्थ बताया गया है। 'गोरक्षसिद्धांतसंग्रह' नामक ग्रंथ गोपीनाथ कविराज ने संपादित किया है, जिसमें गोरखनाथ के सिद्धांत एवं दर्शन से सम्बन्धित सबदी एवं पद संकलित किए गये हैं –

1. योगशास्त्रं पठेन्नित्यं किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः । [8]
2. न वेदोवेद इत्याहुर्वेदा वेदोः निगद्यते परमात्मा विद्यते येन स वेदो वेद उच्चते। [9]

गोरखनाथ ने अंतस्साधना पर बहुत अधिक बल दिया है, जहाँ हृदय को दर्पण मानकर साध्य और साधक में बिम्ब–प्रतिबिम्ब भाव परिलक्षित होता है–

हृदयं दर्पणं यस्य मनस्तत्र विलोकयेत्
दृश्यते प्रतिबिम्बेन आत्मरूपं सुनिश्चितम् '' [10]

'नाद', बिन्दु, 'अनहदनाद' इत्यादि जो संज्ञाएं सिद्ध साहित्य तथा वज्रयान में प्रयुक्त हुई हैं उनका विस्तारपूर्वक वर्णन नाथ पंथ में परिलक्षित होता है। नाथ पंथी साधक 'नाद' और 'बिन्दु' के योग से संसार की उत्पत्ति मानते हैं। गोपीनाथ कविराज द्वारा संपादित 'गोरक्षसिद्धान्तसंग्रह' में 'नाद', बिन्दु, प्राण, प्राणायाम, अजपाजाप, सोऽहम से सम्बन्धित अनेक सबदी और पद संकलित हैं। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं –

नाथांशो नादो, नादांशः प्राणः,
शक्त्यंशों बिन्दुः, बिदोरांश शरीरम।'' [11]

इस तरह नाथ सम्प्रदाय बाह्याचारों का खण्डन करके अंतस्साधना द्वारा ब्रह्म साक्षात्कार का सिद्धान्त प्रतिपादित करता है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की मान्यता है कि ''इस प्रकार इस मार्ग में (नाथ सम्प्रदाय में) कठोर ब्रह्मचर्य, वाक्–संयम, शारीरिक शौच मानसिक शुद्धता, ज्ञान के प्रति निष्ठा, बाह्य आचरणों के प्रति अनादर, आन्तरिक शुद्धि और मद्य–मांसादि के पूर्ण बहिष्कार पर जोर दिया गया है। '' [12]

## नाथ सहित्य के प्रमुख कवि–

जिस प्रकार सिद्धों की संख्या 84 प्रसिद्ध है, उसी प्रकार नाथों की संख्या 9 प्रसिद्ध है। नवनाथ की शब्दावली लोक में प्रसिद्ध ही है, किंतु इनमें सभी हिंदी के कवि नहीं है। नागार्जुन, जड़भरत, हरिश्चन्द्र, सत्यनाथ, भीमनाथ, गोरक्षनाथ, चर्पट, जलन्धर और मलयार्जुन के नाम 'गोरक्ष–सिद्धतिसंग्रह' में दिए गये हैं। हिंदी कविता की दृष्टि से उपर्युक्त नाथों में सर्वप्रमुख गोरखनाथ ही माने गये हैं। गोरखनाथ के अतिरिक्त चौरंगीनाथ, गोपीचंद, चुणकर नाथ, भरथरी, जलंधीपाव इत्यादि कवियों का नाम नाथपंथी साहित्य में बताया जाता है, किन्तु कवित्व तथा विचार–दर्शन की दृष्टि से इनका कोई उल्लेखनीय योगदान नहीं है। इन कवियों ने प्रायः गोरखनाथ के भावों का ही अनुकरण किया है।

## नाथ साहित्य की भाषा

नाथ साहित्य का समय डॉ0 रामकुमार वर्मा ने 12वीं से 14वीं सदी के मध्य तक माना है। भाषा की दृष्टि से उक्त काल को अपभ्रंश काव्य कह सकते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने सिद्धों की भाषा को देश भाषा मिश्रित अपभ्रंश बताया है। शुक्ल जी के शब्दो में – ''इस प्रकार नाथ पंथ के इन जोगियों ने परंपरा साहित्य की भाषा या काव्य भाषा से, जिसका ढाँचा नागर अपभ्रंश या व्रज का था, अलग एक 'सधुक्कड़ी' भाषा का सहारा लिया जिसका ढाँचा कुछ खड़ी बोली के लिए राजस्थानी का था'' [13]
नाथ पंथ की भाषा पर विचार करते समय यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि देश के पश्चिमी भागो– राजस्थान, पंजाब, हिमांचल आदि क्षेत्रों में नाथ पंथ का प्रचार–प्रसार हुआ, इसलिए पश्चिमी हिन्दी की पूर्ववर्ती अपभ्रंशो का प्रभाव इसमें विद्यमान है। भाषा और छंद की दृष्टि से नाथ पंथ संत साहित्य का पूर्ववर्ती है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

अंजन माँहि निरंजन भेट्या, तिल मुख भेट्या तेलं।
मूरति मांहि अमूरति परस्या, भया निरंतरि खेलं।।'' [14]

पहले बताया जा चुका है कि नाथ पंथ सिद्ध सम्प्रदाय से विकसित हुआ है, और सिद्ध सम्प्रदाय का प्रचार–प्रसार देश के पूर्वी भागो– विहार, बंगाल, उड़ीसा, असम तथा पूर्वोत्तर भागो में हुआ। सिद्ध साहित्य से उत्पन्न होने के कारण नाथ सम्प्रदाय विशेषतः गोरखनाथ के पदों में पूर्वी हिन्दी की विशेषताएं परिलक्षित होनी हैं। 'देपिबा, विचारिबा, राषिबा, चढ़ाइवा, पौढ़या, रहिबा, करिबा, हंसिबा, गाइबा जैसे पूर्वी हिन्दी की क्रियाएं नाथ साहित्य की बानियों में दिखाई पड़ती है।
वहीं दूसरी ओर नाचै, खेलै, बसै, भेट्या, परस्या, प्रकास्यो, बूझै, हंसै, कै, रहै, कहै, लीजै, कीजै इत्यादि पश्चिमी हिन्दी की विशेषताएं नाथ सम्प्रदाय की कविताओं में देखी जा सकती हैं। संज्ञा तथा शब्द रूपों में तत्सम तथा तत्सम संस्कृत से विकृत शब्दो तथा नाम रूपों का प्रयोग नाथ पंथ की बानियों एवं पदों में दिखाई पड़ता है। वेद, कतेब, काम, क्रोध, गीत, चीत (चित्त), अलष, अहैनिसि, उनमन, जोगी, पवन पुरषि (पवन–पुरूष), तत, प्यंगुला–पिगला, इत्यादि शब्द रूप नाथ पंथ में मिलते हैं।

गोरखबानी के पदों तथा बानियों में कारकों का प्रयोग भी संस्कृत कारकों से विकृत होकर (अपभ्रंश की अपनी ध्वनियों में हुआ है, तो कुछ कारक संस्कृत के भी हैं। माहिं, की, कै, के, को, जाको (गंगा के नहाये को नर तरिगा, मछली न तरी जाको पानी में घर है।), इत्यादि कारकों का प्रयोग मिलता है। यहीं यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि कारकों एवं विभक्तियों का स्थान परसर्गो ने ले लिया जिसका प्रयोग प्राकृत एवं अपभ्रंश भाषाओ में होने लगा था। इस सम्बन्ध में भोलानाथ तिवारी का मत समीचीन प्रतीत होता है। वे लिखते हैं – ''वैदिकी और संस्कृत संयोगात्मक भाषाएं थीं। पालि में भी यह विशेषता सुरक्षित है, किन्तु प्राकृत–काल में भाषा अयोग्यात्मकता या वियोगात्मकता की ओर तेजी से बढ़ने लगी। ''

**संदभ ग्रंथ सूची**


1. संस्कृति के चार–अध्याय–रामधारी सिंह दिनकर– पृ0–184
2. संस्कृति के चार अध्याय– रामधारी सिंह दिनकर– पृ0–185
3. संस्कृति के चार अध्याय– रामधारीर सिंह दिनकर– पृ0–7 संस्करण–1997
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ0–9
5. कबीर का दोहा
6. हिन्दी साहित्य का इतिहास– सं. डॉ0 नगेन्द्र, डॉ0 हरदयाल पृ0–63 से उद्धृत
7. गोरखबानी सबदी– सं0 पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल पृ0–51 से उद्धृत
8. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ0 10 से उद्धृत
9. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ0 10 से उद्धृत
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ0 10 से उद्धृत
11. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ0–10
12. हिन्दी काव्य (एस.बी.पी.डी. पब्लिकेशन आगरा)–संपादक–डॉ0एस.के. शर्मा पृ0–70 से उद्धृत
13. हिन्दी साहित्य का इतिहास–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ0–11
14. हिन्दी साहित्य का इतिहास–सं.–डॉ0 नगेन्द्र एवं हरदयाल पृ0–63 से उद्धृत
15. हिन्दी भाषा का इतिहास– डॉ0 भोलानाथ तिवारी–पृ0–38 सन–2004